राजस्थान उच्च न्यायालय, जोधपुर

एस.बी. सिविल रिट याचिका संख्या 15957/2021

राजेन्द्र मीना पुत्र श्री प्रभु मीना, आयु लगभग 27 वर्ष, निवासी ग्राम बहन्द्रीपुरा, पोस्ट अमरगढ़, तहसील सपोटरा, जिला करौली (राजस्थान)।

----याचिकाकर्ता

बनाम

1. राजस्थान राज्य, अपने प्रमुख सचिव, पंचायती राज विभाग, राजस्थान सरकार, सचिवालय, जयपुर के माध्यम से।

2. निदेशक, प्रारंभिक शिक्षा, बीकानेर।

3. मुख्य कार्यकारी अधिकारी, जिला परिषद जोधपुर।

----प्रतिवादी

याचिकाकर्ता(ओं) के लिए: श्री विवेक माथुर

प्रतिवादी(ओं) के लिए: श्री दीपक चांडक

माननीय न्यायमूर्ति अरुण मोंगा

आदेश (मौखिक)

13/05/2024

1. याचिकाकर्ता की शिकायत अन्य बातों के साथ-साथ प्रतिवादियों द्वारा उसे

शिक्षक ग्रेड III के पद पर नियुक्ति न देने के खिलाफ है, जिसमें सभी परिणामी लाभ शामिल हैं।

2. संक्षेप में, याचिका में दिए गए प्रासंगिक तथ्य इस प्रकार हैं:-

2.1 याचिकाकर्ता ने 07.02.2016 को आयोजित REET परीक्षा 150 में से 98 अंक (65.33%) प्राप्त करके सफलतापूर्वक उत्तीर्ण की। प्रतिवादी संख्या 2 ने शिक्षक ग्रेड III के पद के लिए आवेदन आमंत्रित करते हुए दिनांक 06.07.2016 और 11.09.2017 को विज्ञापन जारी किए। 63.62% अंक प्राप्त करने वाले एसटी वर्ग से संबंधित याचिकाकर्ता को प्रश्नगत पद के लिए अनंतिम रूप से चयनित किया गया था। प्रतिवादी संख्या 2 ने दिनांक 14.09.2021 के कार्यालय आदेश के माध्यम से याचिकाकर्ता को जोधपुर जिला आवंटित किया और उसे 23.09.2021 को दस्तावेजों के सत्यापन के लिए भी बुलाया गया।

2.2 हालांकि, जब याचिकाकर्ता ने खुलासा किया कि वह पुलिस स्टेशन बालाघाट, टोडाभीम में धारा 3 और 25 के तहत एफआईआर संख्या 193/2020 वाले मामले में मुकदमे का सामना कर रहा है, तो उसका नाम उक्त आपराधिक मामले के लंबित होने के कारण शामिल नहीं किया गया। इसलिए, तत्काल याचिका।

3. जवाब में लिया गया बचाव यह है कि प्रतिवादियों ने 15.07.2016 के कार्यालय परिपत्र के अनुसार लंबित आपराधिक मामले के आधार पर याचिकाकर्ता की उम्मीदवारी पर विचार नहीं किया है। पंचायती राज नियम, 1996 के नियम 256 के अनुसार, किसी व्यक्ति को नियुक्त करते समय उसका अच्छा चरित्र एक आवश्यक शर्त है।

3.1 परिपत्र दिनांक 15.07.2016 में, विशिष्ट शर्तों का उल्लेख किया गया है कि यदि किसी इच्छुक व्यक्ति का आपराधिक इतिहास है, तो उसे नियुक्ति

नहीं दी जा सकती है। इसलिए, वर्तमान रिट याचिका खारिज किए जाने योग्य है।

4. उपर्युक्त पृष्ठभूमि में, मैंने विद्वान वकीलों की प्रतिस्पर्धी दलीलें सुनी हैं और केस फाइल का अवलोकन किया है। अब मैं आगे के पैराग्राफ में इसके कारणों को दर्ज करके अपनी राय प्रस्तुत करूंगा।

5. प्रतिवादियों द्वारा किए गए बचाव में विवाद का सार यह है, और सुनवाई के दौरान मेरे सामने प्रस्तुत तर्क भी यही हैं कि याचिकाकर्ता को शस्त्र अधिनियम, 1959 की धारा 3/25 के तहत उसके खिलाफ दिनांक 18.09.2020 (अनुलग्नक-11) की एफआईआर दर्ज होने के मद्देनजर उसके चयन के बावजूद, प्रश्नगत पद पर नियुक्ति से वंचित किया गया है। प्रासंगिक रूप से, एफआईआर उसकी चयन प्रक्रिया शुरू होने के बाद की है।

6. यह कहा गया है कि परिपत्र दिनांक 15.07.2016 और 04.12.2019 (अनुलग्नक-आर-1) के अनुसार, यदि कोई अभ्यर्थी किसी आपराधिक मामले में संलिप्त है, तो वह नियुक्ति का हकदार नहीं है, क्योंकि वह नियोक्ता की संतुष्टि के लिए अच्छे चरित्र के मानदंडों को पूरा नहीं करता है। विज्ञापन की शर्तों के अनुसार अच्छे चरित्र की आवश्यकता अनिवार्य है। अन्यथा भी, नियोक्ता का यह अधिकार है कि वह अभ्यर्थी के चरित्र के आधार पर उसकी उपयुक्तता का पता लगाए।

7. इसके विपरीत, याचिकाकर्ता के विद्वान वकील यह तर्क देंगे कि यदि याचिकाकर्ता के अच्छे चरित्र पर कोई संदेह था, तो भी उपरोक्त एफआईआर से उत्पन्न मुकदमे में उसके बरी होने के कारण वह पूरी तरह से दोषमुक्त हो गया।

8. उन्होंने कहा कि सक्षम आपराधिक न्यायालय ने 13.12.2023 (अनुलग्नक-एए/1) के आदेश/निर्णय के माध्यम से याचिकाकर्ता को बरी कर दिया था और

राज्य द्वारा उसी आदेश के खिलाफ कभी अपील नहीं की गई थी। इस सीमा तक, याचिकाकर्ता की बरी होने का निर्णय अंतिम हो गया है।

9. वह अपने तर्कों के समर्थन में पंजाब और हरियाणा उच्च न्यायालय द्वारा सुखजीत सिंह एवं अन्य बनाम पंजाब राज्य एवं अन्य (सीडब्ल्यूपी संख्या 9808/2003) और अन्य संबंधित मामले में दिए गए निर्णय पर भरोसा करेंगे।

10. उनका तर्क है कि बरी होना बरी होना है और केवल इसलिए कि याचिकाकर्ता को बरी किए जाने के दौरान संदेह का लाभ दिया गया था, प्रतिवादी उसे इस भ्रामक दलील पर रोजगार देने से इनकार नहीं कर सकते कि उसे सम्मानपूर्वक बरी नहीं किया गया है।

11. प्रतिवादियों के विद्वान वकील ने प्रस्तुत किया कि याचिकाकर्ता के वकील की दलील को भारत संघ बनाम मेथु मेदा 2022 (1) एससीसी 1 में दिए गए सुप्रीम कोर्ट के फैसले के मद्देनजर बरकरार नहीं रखा जा सकता है। प्रतिवादियों के विद्वान वकील की दलीलों का परीक्षण करने के लिए, आइए हम मेथु मेदा में दिए गए फैसले के प्रासंगिक भाग को देखें, जिसे नीचे पुन: प्रस्तुत किया गया है।

> "18. उपर्युक्त के मद्देनजर, वर्तमान मामले के तथ्यों में, पैरा 38.3, 38.4.3 और 38.5 के अनुसार, यह स्पष्ट है कि नियोक्ता को उम्मीदवार को रोजगार में शामिल करने का निर्णय लेते समय सरकारी आदेशों/निर्देशों/नियमों के अनुसार उम्मीदवार की उपयुक्तता पर विचार करने का अधिकार है। जघन्य/गंभीर प्रकृति के अपराधों के संबंध में तकनीकी आधार पर बरी होना, जो कि एक स्पष्ट बरी नहीं है, नियोक्ता को पूर्ववृत्त के बारे में उपलब्ध सभी प्रासंगिक तथ्यों पर विचार

करने का अधिकार हो सकता है, और कर्मचारी की निरंतरता के बारे में उचित निर्णय ले सकता है। यहां तक कि अगर कर्मचारी द्वारा समाप्त किए गए मुकदमे के बारे में सत्य घोषणा की गई है, तब भी नियोक्ता को पूर्ववृत्त पर विचार करने का अधिकार है और उम्मीदवार को नियुक्त करने के लिए मजबूर नहीं किया जा सकता है।

21. उपर्युक्त के मद्देनजर, यह स्पष्ट है कि जो प्रतिवादी पुलिस बल में शामिल होना चाहते हैं, उन्हें अत्यंत ईमानदार व्यक्ति होना चाहिए और उनका चरित्र और निष्ठा बेदाग होनी चाहिए। आपराधिक पृष्ठभूमि वाला व्यक्ति इस श्रेणी में नहीं आएगा। नियोक्ता को दोषमुक्ति की प्रकृति पर विचार करने या उसे पूरी तरह दोषमुक्त होने तक निर्णय लेने का अधिकार है, क्योंकि उसके द्वारा अपराध करने की संभावना भी पुलिस बल के अनुशासन के लिए खतरा पैदा करती है। इसलिए, स्थायी आदेश ने इन मामलों में निर्णय लेने का कार्य स्क्रीनिंग समिति को सौंपा है और समिति का निर्णय अंतिम होगा, जब तक कि दुर्भावनापूर्ण न हो। प्रदीप कुमार (सुप्रा) के मामले में, इस न्यायालय ने वही दृष्टिकोण अपनाया है, जैसा कि मेहर सिंह (सुप्रा) के मामले में दोहराया गया था। राज कुमार (सुप्रा) के मामले में इस न्यायालय द्वारा फिर से यही दृष्टिकोण दोहराया गया है।

22. जैसा कि ऊपर चर्चा की गई है, कानून अच्छी तरह से स्थापित है। यदि किसी व्यक्ति को संदेह का लाभ देते हुए नैतिक अधमता से जुड़े किसी अपराध के आरोप से या गवाहों के मुकर जाने के कारण बरी कर दिया जाता है, तो इससे वह

स्वतः ही रोजगार का हकदार नहीं हो जाता, वह भी अनुशासित बल में। नियोक्ता को स्क्रीनिंग कमेटी द्वारा जारी परिपत्रों के अनुसार उसकी उम्मीदवारी पर विचार करने का अधिकार है। केवल कथित अपराधों का खुलासा और मुकदमे का परिणाम पर्याप्त नहीं है। उक्त स्थिति में नियोक्ता को उम्मीदवार को नियुक्ति देने के लिए बाध्य नहीं किया जा सकता। उच्च न्यायालय की एकल पीठ और खंडपीठ दोनों ने उक्त कानूनी स्थिति पर विचार नहीं किया है, जैसा कि ऊपर दिए गए आदेशों में चर्चा की गई है। इसलिए, उच्च न्यायालय के विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा रिट याचिका संख्या 3897/2013 और खंडपीठ द्वारा रिट अपील संख्या 1090/2013 में पारित किए गए विवादित आदेश कानून में टिकने योग्य नहीं हैं, जैसा कि ऊपर चर्चा की गई है।

12. उपर्युक्त को ध्यान में रखते हुए, सर्वोच्च न्यायालय द्वारा निर्धारित अनुपात के बारे में कोई विवाद नहीं है, क्योंकि जो व्यक्ति पुलिस बल में शामिल होना चाहता है, उसका चरित्र और निष्ठा बेदाग होनी चाहिए और यदि किए गए अपराध में कोई नैतिक अधमता शामिल है, तो नियोक्ता को नौकरी की संवेदनशील प्रकृति को देखते हुए उम्मीदवारी को अस्वीकार करने का अधिकार है, जिसके लिए अनुशासनात्मक बल नियुक्त किए जाते हैं।

13. हालांकि, यहां एक ऐसा मामला है जहां याचिकाकर्ता अपनी चयन प्रक्रिया शुरू होने के काफी बाद में एफआईआर में शामिल था। जैसा कि प्रतिवादियों की ओर से देरी के कारण हुआ, उसे नियुक्त किए जाने से पहले, उसे संबंधित एफआईआर में फंसाए जाने का दुर्भाग्य झेलना पड़ा।

14. यह मानते हुए कि उसे नियुक्ति पत्र जारी करने में कोई देरी नहीं हुई थी, वह सेवा में होता और ऐसी स्थिति में, स्वाभाविक रूप से, केवल एफआईआर दर्ज होने से उसे बाहर नहीं किया जाता, बशर्ते कि नियोक्ता उचित अनुशासनात्मक कार्यवाही शुरू करने के लिए विवेकाधिकार पर निर्भर हो।

15. यह बात सामान्य है कि नियोक्ता के पास कर्मचारी के विरुद्ध एक साथ कार्यवाही करने का विवेकाधिकार है और यदि कर्मचारी सिविल कार्यवाही में अभियोगित है, तो दोषमुक्ति की परवाह किए बिना, उसका परिणाम उसे ऐसी स्थिति में पहुंचा सकता है, जहां आपराधिक कार्यवाही में दोषमुक्ति का बचाव महत्वहीन है।

16. यह कहने में कोई दो राय नहीं है कि केवल एफआईआर दर्ज होने से कोई नागरिक या तो दोषी या अच्छे चरित्रहीन की स्थिति में नहीं आ जाता। प्रत्येक नागरिक को तब तक निर्दोष माना जाता है, जब तक कि वह दोषी साबित न हो जाए। इस मामले में यह पता चलता है कि याचिकाकर्ता पर आरोपित भूमिका ऐसी प्रकृति की नहीं है, जिससे उसके द्वारा किए जाने वाले कर्तव्यों की प्रकृति पर कोई असर पड़े या अन्यथा, यहां तक कि नैतिक पतन की सीमा भी हो। यह कहा गया है कि याचिकाकर्ता पर आरोपित भूमिका केवल इतनी थी कि उसकी जेब में एक कारतूस पाया गया था। यह ऐसा मामला नहीं था कि वह बंदूक लेकर चल रहा था, जो मुख्य आरोपी के कब्जे में थी।

17. ऐसी परिस्थिति में यह बात असंगत है कि बंदूक एक व्यक्ति (मुख्य अभियुक्त) के पास होगी और वह कारतूस दूसरे व्यक्ति (याचिकाकर्ता) को सौंप देगा। इसलिए, कारतूस के याचिकाकर्ता की जेब में होने की संभावना, किसी भी मामले में, एक आरोप है। इस बात से इंकार नहीं किया जा सकता

है कि एफआईआर में याचिकाकर्ता पर आपराधिक दोष लगाने के लिए अभियोजन पक्ष ने आरोप लगाया कि 4 व्यक्ति एक साथ जा रहे थे, जिनमें से एक पिस्तौल लेकर जा रहा था और अन्य चार अपनी जेब में कारतूस लेकर जा रहे थे, जैसा कि अभियोजन पक्ष के बयान वाली एफआईआर की सामग्री से पता चलता है (अनुलग्नक-11)।

18. यदि अभियोजन पक्ष के बयान पर विश्वास किया जाए, तो यह इस बात के बराबर होगा कि बंदूक लेकर जाने वाला व्यक्ति पहले बंदूक चलाने से पहले कारतूस मांगने के लिए दूसरे व्यक्ति के पास जाता है और इस प्रक्रिया में, यदि विश्वास किया जाए, तो वह कारण भी विफल हो जाएगा, जिसके लिए बंदूक लेकर जा रहा था। अभियोजन पक्ष के इस कथन में विश्वसनीयता की कमी है, इसलिए प्रथम दृष्टया ऐसा प्रतीत होता है कि याचिकाकर्ता को सही तरीके से बरी किया गया है। किसी भी मामले में, उसके बरी होने के खिलाफ अभियोजन पक्ष द्वारा कोई अपील दायर नहीं की गई है।

19. इसके अलावा, वर्तमान मामले में, याचिकाकर्ता को केवल इस आधार पर खारिज कर दिया गया है कि उसका बरी होना सम्मानजनक बरी नहीं है।

20. इस संबंध में विवाद पहले ही सुखजीत सिंह और अन्य बनाम पंजाब राज्य और अन्य (सीडब्ल्यूपी संख्या 9808/2003) नामक मामले में मेरे पिछले फैसले से समाप्त हो चुका है, जिसका फैसला 13.08.2019 को हुआ था, जिसे मैंने पंजाब और हरियाणा उच्च न्यायालय के उप न्यायाधीश रहते हुए सुनाया था, जो बदले में पंजाब और हरियाणा के साथ-साथ मद्रास उच्च न्यायालय द्वारा दिए गए डिवीजन बेंच के फैसलों पर आधारित है। आसान संदर्भ के लिए, इससे संबंधित प्रासंगिक जानकारी नीचे दी गई है:

> “12. हर बरी होना सम्मानजनक बरी होना है। दंड प्रक्रिया संहिता में ऐसा कुछ नहीं है और न ही आपराधिक न्यायशास्त्र

का कोई नियम है, जो अभियोजन पक्ष द्वारा मामले को उचित संदेह से परे साबित करने में विफल रहने पर बरी होने से सम्मानजनक बरी होने के प्रभावों और परिणामों का इलाज करता हो।

13. इस न्यायालय की एक खंडपीठ ने शशि कुमार बनाम उत्तर हरियाणा बिजली वितरण निगम और अन्य, 2005 (1) एससीटी 576 नामक एक मामले में मद्रास उच्च न्यायालय की एक अन्य खंडपीठ पर भरोसा करते हुए माना है कि आपराधिक न्यायशास्त्र में सम्मानजनक बरी या पूरी तरह से दोषमुक्त शब्द अज्ञात हैं। उनके लॉर्डशिप एस.एस. निज्जर, जे. (जैसा कि वे तब इस न्यायालय के थे) ने खंडपीठ के लिए बोलते हुए निम्नलिखित टिप्पणी की:

> 7. किसी भी मामले में, दंड प्रक्रिया संहिता या दंड न्यायशास्त्र में "सम्मानजनक बरी" या "पूरी तरह दोषमुक्त" जैसे शब्द अज्ञात हैं। ये शब्द मद्रास उच्च न्यायालय की खंडपीठ के समक्ष संघ भारत बनाम जयराम, एआईआर 1960 मद्रास 325 के मामले में विचारार्थ आए। राजमन्नार, सी.जे. खंडपीठ ने अपना निर्णय सुनाते हुए निम्न प्रकार से टिप्पणी की:
>
> दंड प्रक्रिया संहिता में "सम्मानजनक बरी" जैसी कोई अवधारणा नहीं है। अभियुक्त के अपराध को स्थापित करने का दायित्व अभियोजन पक्ष पर है, और यदि वह उचित संदेह से परे अपराध को स्थापित करने में विफल रहता है, तो अभियुक्त बरी होने का

हकदार है।

सिविल सेवा विनियमन के अनुच्छेद 193 का खंड (बी) जो कहता है कि जब निलंबन के अधीन एक सरकारी कर्मचारी को सम्मानपूर्वक बरी किया जाता है, तो उसे वह पूरा वेतन दिया जा सकता है जिसका वह हकदार होता यदि उसे निलंबित नहीं किया गया होता, यह केवल विभागीय जांच के मामले पर लागू होता है।

जहां नौकर को इसलिए निलंबित किया गया था क्योंकि उसके खिलाफ आपराधिक मुकदमा चलाया गया था, और उसे उसमें बरी कर दिया गया था, और उसे बहाल कर दिया गया था, तो वह सामान्य कानून के तहत अपने निलंबन की अवधि के दौरान पूरा वेतन पाने का हकदार है। ऐसे मामले में अनुच्छेद 193 (बी) लागू नहीं होता है।"

8. मद्रास उच्च न्यायालय के उपरोक्त निर्णय पर इस न्यायालय द्वारा जगमोहन लाल बनाम पंजाब राज्य के मामले में सचिव, पंजाब सरकार सिंचाई एवं अन्य, एआईआर 1967 (54) पंजाब एवं हरियाणा 422 (पंजाब) के माध्यम से विचार किया गया तथा उसका अनुसरण किया गया। उस मामले में, दोषमुक्त होने पर, याचिकाकर्ता को सेवा में बहाल कर दिया गया, लेकिन उसके निलंबन की अवधि को ड्यूटी पर बिताई गई अवधि नहीं माना गया। इसलिए, उसने भारतीय संविधान के अनुच्छेद 226/227 के तहत रिट याचिका दायर की थी,

जिसमें दावा किया गया था कि वह अपने निलंबन की अवधि के लिए पूर्ण वेतन एवं भत्ते का हकदार है। पंजाब सिविल सेवा नियम खंड-I भाग-1 के नियम 7.3, 7.5 एवं 7.6 के प्रभाव पर विचार करते हुए, यह निम्नानुसार देखा गया:

(2) XXX XXX XXX

> सरकार द्वारा नियम की जो व्याख्या की गई है, वह गलत है। याचिकाकर्ता पर जो दोष लगाया गया था, वह यह था कि उसके खिलाफ एक आपराधिक आरोप था, जिसके तहत वह मुकदमा चला रहा था। जिस क्षण वह आरोप से बरी हो जाता है, वह दोष से बरी हो जाता है। आपराधिक कानून में, अदालतों को यह तय करने के लिए कहा जाता है कि अभियोजन पक्ष आरोपी को दोषी साबित करने में सफल रहा है या नहीं। जिस क्षण अदालत आरोपी के अपराध के बारे में संतुष्ट नहीं होती, उसे बरी कर दिया जाता है। चाहे किसी व्यक्ति को संदेह का लाभ देकर या किसी अन्य कारण से बरी किया जाए, परिणाम यह होता है कि उसका अपराध साबित नहीं होता। दंड प्रक्रिया संहिता सम्मानजनक बरी करने की कल्पना नहीं करती। संहिता में केवल 'मुक्त' या 'बरी' शब्द ही ज्ञात हैं। कानून की दृष्टि में किसी व्यक्ति के बरी होने या बरी होने का प्रभाव एक जैसा होता है। चूंकि, आपराधिक न्याय प्रदान करने की स्वीकृत धारणाओं के अनुसार, न्यायालय को अभियुक्त के अपराध के बारे में उचित संदेह से परे संतुष्ट होना चाहिए, इसलिए आमतौर पर

यह माना जाता है कि न्यायालय के मन में संदेह होने पर, अभियुक्त को दोषमुक्त किया जाता है।

इसलिए, मैं अपने मन में बिल्कुल स्पष्ट हूं कि नियम 7.5 के अंतर्गत निहित उद्देश्य इसके अलावा और कुछ नहीं हो सकता है" जिस क्षण किसी अधिकारी को निलंबित करने के कारण आपराधिक आरोप न्यायालय में विफल हो जाता है, उसे दोषमुक्त माना जाना चाहिए। कोई अन्य व्याख्या नियम के मूल उद्देश्य को ही विफल कर देगी। दोषमुक्ति के निर्णय में सम्मानजनक दोषमुक्ति या पूर्ण निर्दोषता की अपेक्षा करना व्यर्थ है। कारण स्पष्ट है; आपराधिक न्यायालयों को अभियुक्त की निर्दोषता का पता लगाने में कोई दिलचस्पी नहीं है। उन्हें केवल यह पता लगाने में दिलचस्पी है कि अभियोजन पक्ष अभियुक्त के अपराध को उचित संदेह से परे साबित करने में सफल हुआ है या नहीं।"

21. इस विदा में, पतराम बनाम राजस्थान राज्य एवं अन्य (एस.बी. सिविल रिट याचिका संख्या 18747/2019) नामक मामले में दिए गए एक अन्य निर्णय का भी संदर्भ लिया जा सकता है, जो संयोगवश एक बार फिर मेरे द्वारा लिखा गया है, यद्यपि कुछ भिन्न परिस्थितियों में, लेकिन उसमें व्यक्त किए गए विचार वर्तमान मामले में भी लागू होते हैं। उसका प्रासंगिक भाग नीचे पुन: प्रस्तुत किया गया है:

“6. याचिकाकर्ता के मामले को गुण-दोष के आधार पर देखते हुए, प्रतिवादियों द्वारा प्रस्तुत जवाब के अनुसार, यह

स्वीकार किया जाता है कि याचिकाकर्ता ने अपने खिलाफ दर्ज एफआईआर के बारे में कोई जानकारी नहीं छिपाई। अपने कर्तव्यों को पूरा करने से पहले, उसने स्वेच्छा से एफआईआर संख्या 309/2019 के अस्तित्व का खुलासा किया, जो आईपीसी की धाराओं 498-ए, 406, 323, 354 के तहत पुलिस स्टेशन अनूपगढ़, जिला श्रीगंगानगर में दर्ज है, जो वैवाहिक कलह के कारण उसकी अलग रह रही पत्नी द्वारा शुरू की गई थी। इसके अलावा, इस एफआईआर से उपजा आपराधिक मुकदमा याचिकाकर्ता के बरी होने के साथ समाप्त हो गया है।

7. इस चरण में याचिका को अनुमति न देने का एकमात्र विरोध प्रतिवादी के विद्वान वकील द्वारा अवतार सिंह बनाम भारत संघ एवं अन्य में दिए गए सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय पर भरोसा करना है, जिसकी रिपोर्ट 2016 (8) एससीसी 471 में दी गई है।

8. उक्त निर्णय को ध्यान में रखते हुए, यह ध्यान में रखना होगा कि उम्मीदवारों को अपने नियोक्ताओं को दोषसिद्धि, दोषमुक्ति, गिरफ्तारी या लंबित आपराधिक मामलों के बारे में जानकारी, रोजगार से पहले और बाद में, बिना किसी छिपाव या झूठे बयान के, सच्चाई से बतानी चाहिए। नियोक्ताओं को, झूठी सूचना के कारण सेवाएं समाप्त करते समय या उम्मीदवारी रद्द करते समय, विशेष परिस्थितियों और प्रासंगिक सरकारी विनियमों पर विचार करना चाहिए। इसके अतिरिक्त, यदि किसी आपराधिक मामले में संलिप्तता के बारे में छिपाव या झूठी

सूचना है, तो उसकी प्रकृति के आधार पर उचित कार्रवाई की जानी चाहिए। सत्यापन/सत्यापन प्रपत्रों की सटीकता और विशिष्टता महत्वपूर्ण है, और छिपाव या झूठे सुझाव के लिए दोषसिद्धि के लिए जिम्मेदार ज्ञान की आवश्यकता होती है। नियोक्ता, निस्संदेह, प्रकट की गई जानकारी पर विचार करने में अपना विवेक बनाए रख सकते हैं और सत्य खुलासे होने पर भी उम्मीदवारों को नियुक्त करने के लिए बाध्य नहीं हैं, खासकर उन मामलों में जिनमें कई लंबित मामले या गंभीर आपराधिक अपराध शामिल हैं।"

22. पिछले भाग में मेरी चर्चा के परिणामस्वरूप तथा उपरोक्त निर्णयों में निर्धारित अनुपात के मद्देनजर रिट याचिका को आवश्यक रूप से स्वीकार किया जाना चाहिए।

23. ऐसा आदेश दिया जाता है।

24. यह सिद्ध है कि रिट कार्यवाही के लंबित रहने के दौरान दिनांक 17.11.2021 के अंतरिम आदेश के तहत प्रतिवादियों को निर्देश दिया गया था कि वे याचिकाकर्ता की उम्मीदवारी को उस पद के लिए रद्द न करें जिस पर उसका चयन किया गया था। इसलिए प्रतिवादियों को निर्देश दिया जाता है कि वे याचिकाकर्ता को उक्त अंतरिम आदेश का लाभ दें, उसके चयन के अनुसरण में उसकी नियुक्ति के लिए उचित आदेश पारित करें तथा उसे सेवा में शामिल होने दें।

25. याचिकाकर्ता द्वारा तत्काल आदेश के वेब प्रिंट के साथ प्रतिवादियों से संपर्क करने के 2 महीने की अवधि के भीतर आवश्यक कार्रवाई की जाए।

26. सेवा से बाहर रहने की अवधि के दौरान, वह 'काम नहीं तो वेतन नहीं' के सिद्धांत पर किसी भी वित्तीय लाभ का हकदार नहीं होगा, हालांकि,

याचिकाकर्ता को वरिष्ठता सहित सभी काल्पनिक लाभ उसी तिथि से दिए जाएंगे, जिस तिथि को उसके समकक्षों को चयन प्रक्रिया के अनुसार नियुक्त किया गया था, जिसमें याचिकाकर्ता ने भी उनके साथ प्रतिस्पर्धा की थी।

27. लंबित आवेदन, यदि कोई हो, का भी निपटारा कर दिया जाएगा।

(अरुण मोंगा), जे

(यह अनुवाद एआई टूल: SUVAS की सहायता से किया गया है)

अस्वीकरण: यह निर्णय पक्षकार को उसकी भाषा में समझाने के लिए सीमित उपयोग के लिए स्थानीय भाषा में अनुवादित किया गया है और किसी अन्य उद्देश्य के लिए इसका उपयोग नहीं किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और आधिकारिक उद्देश्यों के लिए, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण प्रामाणिक होगा और निष्पादन और कार्यान्वयन के उद्देश्य से भी अंग्रेजी संस्करण ही मान्य होगा।